२ यशोधरा काव्य में भारतीय संस्कृति

संस्कृति की परिभाषा :

संसार के संस्कृति सम्पन्न देशों में भारत का प्रमुख स्थान है । संस्कृति की परिभाषा करना कठीन काम है । संस्कृति का अर्थ संस्कार से है ऐसा कहा जाता है । " संस्कृति मानव के सर्वांगीण विकास में स्वीकृत एवं सिध्द आचार-विचार और ज्ञान-विज्ञान से युक्त विशिष्ट जीवन विधा है। इस जीवन विधामें उसकी व्यक्तिगत, समाजगत एवं राष्ट्रीय उन्नति समाहित रहती है ।"[१] प्रागैतिहासिक काल से वर्तमान समयतक संस्कृति का लम्बा इतिहास है । संस्कृति के सम्बन्ध में विद्वानों के कुछ मत इस प्रकार है -

[१] डा. मगलदेव शास्त्री - "किसी देश या समाज के विभिन्न जीवन व्यापारों में या सामाजिक सम्बन्धों में मानवता की दृष्टि से प्रेरणा प्रदान करनेवाले आदर्शोंकी समाष्टिकोही संस्कृति समझना चाहिए ।"[२]

[२] मैथ्यू आर्नल्ड - " अपने से सम्बध्द सभी विषयों तथा सृष्टि में कथित और विचरित सर्वोत्तम ज्ञानद्वारा अपनी पूर्व संचित कल्पनाओं और आधारोंपर जिनका आज इन विश्वासपूर्वक यंत्रवत अनुकरण करते है, नूतन और स्वतन्त्र चिन्ताधारा का प्रवाह ही संस्कृति है ।"[३]

संस्कृति का अंग्रेजी पर्याय culture दोनों का ही मूल लैटिन शब्द cultura है। संस्कृति मानव का कल्याण करती है और सभी विकारों का परिमार्जन करती है ।

१] मैथिलीशरण गुप्त और वल्लत्तोल का तुलनात्मक अध्ययन - के. एस. मणि - पृ. १६८

२] मैथिलीशरण गुप्त का साहित्य - मीतलव्दारका प्रसाद - पृ. १४०

३] वही - पृ. १४०

गुप्तजी की संस्कृति :

प्रत्येक देश अथवा जाति की अपनी संस्कृति हुआ करती है । भारतीय संस्कृति भी भारतीय जाति अथवा जनता की संस्कृति हैं । संस्कृति के दो रूप है । १] बाह्य २] आभ्यन्तर है । बाह्य रूपमें भौतिक वातावरण और ऐतिहासिक अथवा कुलक्रमागत परम्पराएँ आती है, तथा आभ्यन्तर में पूर्व निर्मित संस्कार आते है । भारतीय संस्कृति अनंत प्राचीन है तथा कवि गुप्त भारतीय संस्कृति के सच्चे पुजारी थे, वे राष्ट्रकवि रहे पर रचनाक्षेत्र संस्कृति ही रहा । गुप्तजी उसी संस्कृति की हृदय से अर्चना करते थे जिसमें हिन्दुत्व का भाव भरा हो । हिन्दु संस्कृति का आधार मुख्यत: वेद, रामायण, गीता, महाभारत आदि है । कवि गुप्तजी अवतारवाद के प्रति आस्थावान थे ।

मैथिलीगुप्तजी आधुनिक काल के कवि थे, किंतु उनके संस्कार हिन्दुत्व के पवित्र भावोंसे आप्लावित थे । उनका कारण है तथाकथित वातावरण । पिता राम के भक्त थे अपना समय भग्वद्भजन में ही बिताते थे । माता भी परम दयावती और भक्तिन थीं । इन वातावरण का प्रभाव गुप्तजीपर था । गुप्तजी अहिंसा में विश्वास रखते थे । गुप्तजीपर कालिदास और गोस्वामी तुलसीदास का प्रभाव था ।

" मैथिलीशरण गुप्तजीने नवीनता के साथ प्राचीनता का अद्वितीय समन्वय किया है । वे न तो किसी का अन्धानुकरण करनेवाले थे और न अपनी बातपर अडनेवाले थे । जो समीचीन हो वही उन्हें मान्य था । साहित्य के साथ साथ उक्त समन्वय उन्होंने अपने जीवन में भी किया । यह तो निर्विवाद ही है कि वे भारतीय संस्कृति के प्रबल आख्याता थे ।"[१]

१] मैथिलीशरण गुप्त का साहित्य - मीनलव्दारका प्रसाद - पृ. १४३

यशोधरा काव्य में भारतीय संस्कृति :

भारतीय संस्कृति में मनुष्य एक व्यक्ति का दु:ख देखकर दुसरा व्यक्ति ही दु:खी होता है, इसतरह सिध्दार्थ रोग, जरा और मृत्यु का दर्शन करके दु:खी होता है, और सभी बातों का त्याग कर "महाभिनिष्क्रमण" के लिए जाता है। भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार की कल्पना की गई है, उसीतरह "यशोधरा" काव्य के सभी पात्र संयुक्त परिवार में ही रहते है । इसमें शुध्दोधन, महाप्रजावती, सिध्दार्थ, राहुल, यशोधरा, एकही परिवार के सदस्य है ।

" अबला - जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी ।
अंचल में है दूध और आँखो में पानी ।। "

यह उक्ति एक ओर यशोधरा के व्यक्तिगत जीवनपर घटित होती है, यह उक्ति भी दूसरी ओर भारतीय नारी की दास्य स्थिति की प्रकट करती है। "यशोधरा" काव्य में यशोधरा अपने पति की प्रतीक्षा करती है दूसरी ओर राहुल पुत्र का पालनपोषण करती है । इस पक्तियों में यशोधरा के बहाने युग-युग की नारी का दोहरा व्यक्तित्व सहज दिखायी देता है । भारतीय संस्कृति नारी के साथ न्याय नहीं कर सकी है ।

भारतीय संस्कृतिमें पत्नि अपने पति के प्रति आदर रखती है और पति के प्रति अपने कर्तव्य को जानती है उसीतरह "यशोधरा" काव्य में यशोधरा अपने पुत्र राहुल का पालनपोषण करती है और शुध्दोधन और महाप्रजावती के साथ रहती है और सिध्दार्थ के प्रति आदर भी रखती है ।

भारतीय नारी में दु:ख सहन करने की प्रवृति है । उसी तरह "यशोधरा" काव्य में वियोग की पीडा एक ओर यशोधरा के हृदय की दुखा रही है,

तो दूसरी ओर रोते हुए शिशु को चुप करना चाहती है -

चुप रह, चुपरह, हाय अभागे
रोता है अब किसके आगे?
बेटा मैं तो हूँ रोने को,
तेरे सारे मल धोने को ?
हँस तू है सब कुछ होने को,
भाग्य आएँगे फिर भी आगे
चुप रह, चुप रह, हाय अभागे ।

भारतीय संस्कृति में अपने पुत्र को सुखी देखना पिता का कर्तव्य होता है, उसीतरह शुध्दोधनने अपने पुत्र सिध्दार्थ के लिए सभी तरह की सुख सुविधा की योजना की थी ।

यशोधरा अपने पति का सुख अपना सुख मानती है। गौतम के लिए वह सर्वस्व त्याग देती है । अपने पतिपर उसका सम्पूर्ण विश्वास है । नारी सत्य के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है । और संसार को बता देना चाहती है कि नारी जाति कितनी स्वाभिनिष्ठ होती है । अपने इसी भाव को प्रकट करते हुए वह कहती है -

" भक्त नहीं जाते कहीं, आते हैं भगवान,
यशोधरा के अर्थ है अब भी यह अभिमान ।
मैं निज राज भवन में, सखि, प्रियतम वनमें ।"

भारतीय संस्कृति में पतिव्रत धर्म से अलग नही रहती उसीतरह यशोधरा का भी विश्वास है कि नारी पतिव्रता है तो उसके लिए संसार के

सभी भारढो लेना सहज है और कोई भय उसको पतिव्रत धर्म से नहीं डिगा सकता -

यदि मैं पतिव्रता तो मुझको कौन भार भयभारी ।

भारतीय संस्कृति में स्वावलम्बी होना ही उचित माना है । यशोधराने अपने पुत्र राहुल को उपदेश दिया है कि आत्मनिर्भरता जीवन को सार्थक बनाती है । परावलम्बी होने से न तो अधिक उन्नति है और न ही समाज तथा परिवार की । अत: कार्योंसे स्वयं का भार वह करना चाहीए। -

बेटा पुरुषों के लिए स्वावलम्बी होना ही उचित है ।
दूसरों का भार बनना पौरुष का अनादर करना है ।

मन को दुर्बल बनाना उचित नहीं है । जो तन मन से कार्य करता उसे कोई रोक नहीं सकता ।

भारतीय संस्कृति में गुरु का स्थान माता-पिता से भी महान बताया गया है । यशोधरा अपने पुत्र को कहती है, कि गुरु शिष्य के जीवन को आदर्शमय बनाता है । मातापिता तो केवल जन्म देने का काम करते है उचित अनुचित का ज्ञान गुरु ही देता है -

ठीक ही तो है बेटा । माता पिता जन्म देते है,
परन्तु सफल उसे आचार्य देव ही बनाते है ।
इसे क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए
वही इसे बताते है ।

नारी कभी हीन नही होती वह दया की मूर्ति होती है

गौतम-ने गोपासे कहा है -

दीन न हो गोपे, सुनो हीन नहीं नारी कभी,
मूर्त दया मूर्ति वह मन से शरीर से ।

"यशोधरा" काव्य में वृध्दों माताओं की आशाओं का चित्र मिलता है । महाप्रजावती कहती है -

जरा आ गई वह क्षण भरमें ।
बैठी हूँ मैं आज डगर में ।।
लडकी तो ऐसे अवसर में,
देता जा ओ लाला,
मैंने दूध पिला पर पाला ।

"यशोधरा" काव्य में यशोधराने कर्तव्यपालन, मर्यादा, शिष्ठाचार को सर्वाधिक महत्त्व, प्रदान किया। यशोधरा त्याग के साथ अनुरागीनी थी । भारतीय संस्कृति की सभी परम्परा " यशोधरा " काव्य में मिलती है ।

३ यशोधरा काव्य में प्रकृतिचित्रण

काव्य और प्रकृतिका सम्बन्ध :

काव्य और प्रकृति का घनिष्ठ सम्बन्ध है । सौन्दर्य का प्रत्यक्षीकरण काव्य में होता है, और प्रकृति सौन्दर्य का अक्षयकोष है । प्रकृति अपने नाना रूपों की भावनाओं को दिर्घकाल से प्रभावित करती चली आ रही है । प्रकृति के कारण में ही मानव की आँखे खुली उसीमें मानव हँसना गाना सीखा है । इसलिए सम्पूर्ण साहित्य में प्रकृति मानव की सहचरी के रूपमें चित्रित की गई है । भारतीय साहित्य में वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक प्रकृति के विभिन्न रूपों का दर्शन होता है । प्रकृति के अनेक रूपों और व्यापारों का मानव के भावों के साथ सम्बन्ध है ।

हिन्दी साहित्य में प्रकृति चित्रण :

हिन्दी साहित्य में प्रकृतिचित्रण की एक लम्बी परंपरा रही है। भक्तिकालमें संस्कृत काव्यों की पध्दतिपर प्रकृति चित्रण आलम्बन और उद्दीपन रूपमें हुआ । भक्तिकाल में आलम्बन रूपमें ही अधिक चित्रण हुआ है । तुलसीदासने प्रकृति का उपयोग मानव को उपदेश देने में किया है । सूरदासने गोपियों की विरहभावना को उद्दीप्त करने के लिए और कृष्ण के सौन्दर्य को व्यक्त करने के लिए उपमान के रूपमें प्रकृति का चित्रण किया है । रीतिकाल में बिहारी, देव घनानंद, सेनापति ने रीति-परम्परा का पालन करने के लिए प्रकृति का वर्णन किया है। रीतिकालमें प्रकृति का कार्य नायक-नायिका के हृदय की भावनाओं को उद्दीप्त करना ही दिखाई पडता है । आधुनिक कालमें प्रकृति चित्रण में आलम्बन रूपकों को महत्व दिया । आधुनिक काल में पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से हिन्दी साहित्य में प्रकृति चित्रण की नवीन

पध्दति आयी । जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, और सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने इस कार्य को विशेष रूप से किया है । इस प्रकार हिन्दी साहित्य, संस्कृत और पाश्चात्य साहित्य में वर्णित प्रकृति चित्रण की विभिन्न पध्दतियों का संगम स्थल बन गया है ।

कवि मैथिलीशरण गुप्त की प्रारंभिक रचनाओं में प्रकृति का उपयोग केवल अलंकार रूप में है, प्रकृति का स्वतंत्र रूपसे चित्रण नहीं है, और गुप्तजीका प्रकृति के प्रति रागात्मक सम्बध ही प्रतीत होता है । "यशोधरा" काव्य में प्रकृति का वर्णन सुन्दर हुआ है । यशोधरा में प्रकृति चित्रण सायास नहीं, धारावाहिका रूपमें स्वयं ही वह चित्रण यथास्थान आया है। इस विषयमें डा. सत्येन्द्र का कथन है कि " गुप्तजी अंग्रेजी के कवि वर्ड्सवर्थ की तरह प्रकृति के कवि नहीं थे। प्रकृतिने उनकी कलम पकडकर नहीं लिखा, परन्तु वे प्रकृति और मानव दोनों के प्रतिनिधी बने रहे और एक सहृदय कवि की भाँति उन्होंने प्रकृति और मनुष्य में सामंजस्य स्थापित किया है । "[1] कवि गुप्तजीने अपने जीवन और काव्य में करुणा को अधिक पनाहा दिया है और कवी करुणत्वने उन्हें प्रकृति की ओर आकृष्ट किया है ।

कवि गुप्तजी प्रकृति के कवि नहीं है । तथापि अपने काव्यों में वे प्रकृति के प्रभाव से बच नहीं पाये है। यशोधरा प्रकृतिचित्रण में गुप्जीने विभिन्न शैलियों को अपनाया, है, जैसे यथातथ्य प्रकृति चित्रण, पृष्ठभूमि के रूपमें, प्रकृति का मानवीकरण, उद्दीपनरूपमें, बिम्ब-प्रतिबिम्बात्मक, उपदेशात्मक, अलंकारात्मक, रहस्यात्मक, प्रतिकात्मक, दुनिका आदि के रूपमें यहाँ विभिन्न प्रकार के प्रकृतिवर्णन दिग्दर्शन का प्रयास करते है।

१] यशोधरा काव्य - संदर्भ-सं. वीरेन्द्रकुमार बडजात्या - पृ.१३२

१] यथातथ्य प्रकृतिचित्रण :

मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युगीन कवि थे । द्विवेदी युगीन कवियोंमे यथातथ्य प्रकृति-चित्रण कला विशेष उजागर है । इस प्रकार का प्रकृतिचित्रण कवि गुप्तजी उसी अवस्थामें करता है, जब उसका हृदय प्रकृति के अलौकिक सौन्दर्य को देखता है । इस कारण वह प्रकृति का हू बहू चित्र खींचने के लिए विवश हो जाता है । गुप्तजी का उद्देश्य "यशोधरा" काव्य में उपेक्षितनारीजीवन की कथा कहना था । इस कारण इसमें प्रकृति का यथातथ्य चित्रण कम ही मिलता है । यथातथ्य प्रकृतिचित्रण के उदा -

ऊपर तारे झलक रहे हैं ;
गोखों से लग ललक रहे है,
नीचे मोती ढलक रहे है ।

२] पृष्ठ भूमि के रूपमें प्रकृतिचित्रण :

इसमें मानव की भावनाओं और कार्यों की पृष्ठभूमि स्वरूप चित्रित किया जाता है । इसमें प्रकृति कहीं अनुकूल और कहीं प्रतिकूल बन कर आती है। "यशोधरा" काव्य में कवि गुप्तजीने मानव हृदय की भावनाओं और कार्यों की भूमि प्रकृति से सजाई है । यशोधरा अपने हृदय की वेदनाओं के अन्त के लिए "सुन्दर मरण" का वरण करना चाहती है, किन्तु इस समय में भी प्रकृति उसके मरण के स्वागत के लिए फूलों का फर्श बिछाती है और मन्द मलयानिल का स्पन्दन निमित्त होता है । कवि गुप्तजीने प्रकृति को अनुकूल पृष्ठभूमि के रूप में प्रस्तुत किया है, देखें -

फूलों पर पद रख, फूलों पर रच लहरों से रास,
मन्द पवन के स्पन्दनपर चढ बढ आया सविलास ।

इसमें प्रकृति की पृष्ठभूमि में विरहिणी गोपा की अनुभूतियों का मनोवैज्ञानिक परिचय दिया । यशोधरा अनुभव करती है कि अभागिनी के भाग्यमें मृत्यु भी नहीं लिखी । उसे प्रियतम का तो क्या यम का भी सुयोग नहीं है ।

प्रकृति के भयंकर रूप का चित्रण प्रतिकूल पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है । ऐसी योजना वहीं होती है, जहाँ मानवेत्तर जगत् के दृश्यों की प्रतिकूल घटनाओं की योजना मानव जगत में की जाती है। इस तरह के योजनासे कवि पाठकोंके हृदय में आकस्मिकता का आनन्द उपजाता है । "यशोधरा" काव्य के प्रारंभ में सिध्दार्थ मानव के भीषण कंकाल की विभीषिका से विमस्त हो यकायक "मृत्यु-विजय-अभियान" का कठोर व्रत लेते है । इसलिए महाभिनिष्क्रमण के प्रसंग में प्रतिकूल पृष्ठाधारात्मकप्रकृति का चित्र है, जैसे -

यह घन तम सन-सन पवन जाल
भन भन करता यह काल, ब्याल
मूर्च्छित विषाक्त वसुधा विशाल ।

२] <u>प्रकृतिका मानवीकरण</u> :

इसमें प्रकृति को मानव रूपमें चित्रित किया जाता है और मानवीय भावनाओंके प्रकृति में दर्शन किये जाते है ।

"यशोधरा" काव्य में गौतम के वियोग से सिर्फ गोपा, नन्द, शुध्दोदन एवं प्रजाजन ही व्यथित नही है, अपितु "कुंज कुटीर " भी सूना है । सिध्दार्थ की अनुपस्थितिसे सारी प्रकृति अनाथ-सी हो उठी, उदा. -

उनका यह कुंज कुटीर वही,
झड़ता उड अंशु - अबीर जहाँ,
अलि, कोकिल, कीर, शिखि सब हैं,
सुन चातक की रट "पीव" कहाँ?
अब भी सब साज समाज वही
तब भी सब साज **अनाथ यहाँ** ।

४] <u>उद्दीपन रूपमें प्रकृतिचित्रण</u> :

जिस किसी हृदयमें लालसा सो रही होती है अथवा किसी प्रकार की दुर्बलता अपने विकृत रूप को प्रकट करने के लिए अवसर की खोज में है, उसके लिए प्राकृतिक पदार्थ उद्दीपन का काम करते है । अनंत काल से प्रकृति को उद्दीपन के रूप में चित्रित करने की एक परम्परा चली आ रही है। इसमें बारहमासा, षड्ऋतुवर्णन आदि के प्रसंग रहते है। यशोधरा काव्य में प्रकृति गोपा के विरहोद्दीपन में साधिका बनी है । विरह की अवस्था में मानव को प्रकृति में वैषम्य अधिक प्रतीत होने लगता है। इसमें शीतल वस्तुएँ भी दाहकारीणी और सुन्दर दृश्य भी अनाकर्षक लगते है। कविने इसका यथार्थ उल्लेख किया है। प्रात:काल का मनोरम दृश्य विरहिणी यशोधरा को करता है तो क्षोभपूर्वक यशोधरा कहती है -

पौ फटकर भी निरुपाय, भरे है अपने भीतर आग तू ।

प्राकृतिक दृश्य में किसी पात्र की भावनाएँ सुखात्मक और दुखात्मक दोनों ही रूपों में प्रभावित होती है। प्रकृति अपनी समवेदना में आँसू बहाती प्रतीत होती है तो कभी उसे प्रकृति उपहास करती प्रतीत होती है । प्रथम प्रकारके प्रकृति चित्रण में वह उसके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता है, जब कि व्दितीय प्रकार के प्रकृतिचित्रण में शेष दिखाना है । यशोधरा में प्रथम कोटी चित्रांकन

लीजिए, यशोधरा को अपने साथ साथ इन्दुकला भी कला करती परिलक्षित होती है, क्योंकि इन्दुकला का प्रियतम ढल गया है अतः यशोधरा उसके साथ सखी भाव स्थापित करती हुई कह उठती है -

" अब क्या है रक्खा रोने में१
इन्दुकले दिन काट शून्य के किसी एक कोने में ।"

डॉ. किरणकुमारी गुप्त ने उचित ही लिखा है कि "विप्रलम्भ-शृंगार में गुप्तजीने प्रकृति और मानव का सुन्दर समन्वय किया है। उन्होंने प्रकृति को मानव भावों को उद्दीप्त करने का प्रधान अंग समझा है ।"[१] वसन्तागम पर जब यशोधराने देखा कि -

कूक उठी है कोयल काली
..... और
समय स्वयं यह सजा रहा है डगर में डाली,
मृदु समीर यह बजा रहा है नीर तीर पर ताली,
लता कण्टकित हुई ध्यान से ले कपोल की लाली,
फूल उठी है हाय । भान से प्राण भरी हरियाली ।

५] <u>बिम्ब प्रतिबिम्ब रूप में प्रकृति चित्रण</u> :

इसमें प्रकृति और मानव के कार्य कलापों में समता दिखायी देती है । यशोधरा काव्य में शान्त शरदागमनपर यशोधराने प्रकृति में अपने प्रियतम का प्रतिबिम्ब इस तरह देखा -

---

१] सं.वीरेन्द्रकुमार बडतूवाला - यशोधरा काव्यसंदर्भ - पृ.१३७

उनकी शान्ति - कान्ति की ज्योत्स्ना जगती है पल पलमें,
शरदलाप उनके विकास का सूचक है थल थल में ।

६] <u>उपदेशात्मक रूपमें प्रकृति चित्रण</u> :

प्रकृति के कार्य - कलापों से मानव को उपदेश देने में उसका चित्रण किया जाता है । श्री. मैथिलीशरण गुप्त - द्विवेदी युग में प्रकृति के माध्यम से मानव को संदेश देना कविता के लिए अनिवार्य था । कविने प्रकृति के आवरणमें मानव को संदेश - उपदेश दिया है । "यशोधरा" काव्य में गुप्तजी अपनी वैष्णव भावना को प्रतिपादित करने में बडे दत्तचित्त रहे हैं । इस भावना की पुष्टि के लिए उन्होंने शेष सृष्टि अवयवों को साधक बनाया । यह सत्य है कि संसार की वस्तुएँ क्षणिक है । सिध्दार्थने इसलिए कहा था -

मैं सूँघ चुका वे फुल्ल फूल,
झडने को है सब झरिति झूल ।
चरण देख चुका हूँ मैं समूल -
सडने को है वे अखिल आम ।

७] <u>अलंकारिक रूप में प्रकृति चित्रण</u> :

मानव के सौन्दर्य भावोंके लिए प्रकृति से उपमान ढूँढे जाते है । गुप्तजीने उपमा और रूपक का आश्रय लेकर प्रकृति का चित्र अंकित किया है । यशोधरा से अलंकारमय कुछ प्राकृतिक प्रसंग इस प्रकार प्रस्तुत किये जा सकते है -

१] सखि, वसन्त से कहाँ गये वे,
मैं ऊष्मा - सी यहाँ रही । [उपमा]

२] देखो दो - दो मेघ बरसते,
मैं प्यासी की प्यासी । [अतिशयोक्ति]

८] रहस्यात्मक-प्रतीकात्मक रूपमें प्रकृतिचित्रण :

गुप्तजी पर छायावाद का प्रभाव पडा है। छायावादी कवि रहस्यवादी दृष्टिकोण अपनाते है । रहस्यवादी प्रकृति में परमतत्व के दर्शन करता है और इस तरह प्रकृति विश्वात्मा के दर्शन का माध्यम बन जाती है । इस भावना का आधार सर्वात्मवाद है । इसके दो रूप है - आत्मा और परमात्मा की एकता और जगत् और ब्रम्ह की एकता । आत्मा और परमात्मा की एकता में मनुष्य अपनी आत्मा और परमतन्त्र में अव्दैत भावना का अनुभव करता है, अपनी आत्मा में ही वह सर्व - नियन्ता प्रभु के दर्शन करता है, उसके सब क्रिया कलाप परमशक्ति की प्रेरणा से होते हैं, उसके हर्ष विषाद, सुख दु:ख, आनन्द-विलास आदि इसीसे सम्बध्द रहते है । इसी अव्दैत भावनासे उसके मुख से रहस्यात्मक प्रतीकोंसे सम्पन्न उक्तियाँ निकाल पडती है । "यशोधरा" काव्य में कुछ स्थलोंपर ही प्रकृति के ऐसे स्वरूप का पता चलता है, जैसे -

यह प्रभात या रात है घोर तिमिर के साथ,
नाथ । कहाँ हो हाय तुम । मैं अदृष्ट के हाथ ।

९] दुतिका रूपमें प्रकृतिचित्रण :

प्रकृति के अनेक उपादानों का प्रयोग दूत या दुतिका के रूप में कविगण करते रहे है । मलिक मोहम्मद जायसी तो इसमें सिध्दहस्त है । गुप्तजीने प्रकृति को दुतिका के रूपमें प्रस्तुत किया है । मात्रा की दृष्टिसे ऐसा वर्णन "यशोधरा" काव्य में थोडा ही है ।

इस प्रकार हम देखते है कि गुप्तजी ने अवसर पाते हुए प्रकृति यथातथ्य, उद्दीपन, बिम्ब प्रतिबिम्बात्मक मानवीकरण, उपदेशात्मक, अलंकारात्मक, रहस्यात्मक, प्रतिक्षात्मक, दूतिका रूपमें यशोधरा में चित्रित किया है। कविने बाह्य प्रकृति और अन्तर्जगत् की प्रकृति में एकरूपता का सुन्दर निर्वाह किया है । प्रकृति का मानवसापेक्ष स्वरूप ही उनकी रचना में दृष्टि गोचर होता है । "यशोधरा" काव्य में प्रकृति का स्वतन्त्र अस्तित्व नही है । क्योंकि अलम्बन रूपमें प्रकृतिवर्णन बहुत कम हुआ है । कवि गुप्तजी के प्रकृतिचित्रण में एक विशेष प्रकार की द्रवणशीलता और कोमलता की झलक है जो हिन्दी कविताकी अनुपम धरोहर है ।

४ यशोधरा काव्य में विरहवर्णन

विरह के सम्बन्ध में प्रसादने यह उचित ही कहा है -
" विरह प्रेम की जाग्रत गति है और सुषुप्ति मिलन है । "[१]
प्रेम की तीव्रता और वास्तविकता का परिचय प्रेमियों के बिछुडने पर ही मिलता है । संयोगकालमें प्रेम भावना को अभिवृध्द करने के स्थानपर उदासीनता का उद्रेक होता है, और वियोग प्रेम भावना पर शान चढा देता है। रस की दृष्टि से देखा जायें तो विप्रलम्भ शृंगार का साहित्यमें महत्वपूर्ण स्थान है ।

" यशोधरा " काव्य में यशोधरा का विरहवर्णन हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रहवता है, तुलसी की सीता, जायसी की नागमती, हरीऔध जी की राधा, प्रसाद की श्रध्दा, गुप्तजी की उर्मिला और यशोधरा हिन्दी साहित्यकी विरहिणी नारीयाँ है । तथा रीतिकाल और छायावाद में विरह वर्णन में कवि प्रभिभा का प्रदर्शन मिलता है ।

विरह प्रेम की कसौटी है। संयोग और वियोग रस के दो प्रकार है। मुंशी प्रेमनन्दने इस विषय में ही लिखा है कि"जो व्यक्ति एकान्त में बैठकर किसी की स्मृति में या वियोग में बिलख-बिलखकर नहीं रोया, वह जीवन के एक ऐसे सुख से वंचित है, जिसपर सैकडों मुस्कानें न्योछावर है । इसका अर्थ है कि विरहिणी होते हुए भी यशोधरा हम जैसी अभागिनी नहीं थी।

१] गुप्तजी और उनकी यशोधरा - प्रो. कृष्णमोहन अग्रवाल पृ. १२८

SANT BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY SHIVAJI UNIVERSITY

उसने एकान्त में बैठकर सिध्दार्थ की याद में बिलख बिलख कर आँसू बहाये, थे और उसने जीवन का वह सुख भोगा था, जिससे हम में से अनेक वंचित हैं । ऐसे विशेष भागोंवाली यशोधरा के प्रति मैथिलीशरण गुप्त का आकृष्ट होना स्वाभाविक था ।"[१]

"यशोधरा" काव्य की यशोधरा पति वियुक्ता है । यहाँ संयोग पक्ष का विस्तार नही हुआ है । यशोधरा के प्रेम लडी वियोगावस्था में संयोगपक्ष से जुडी है । "यशोधरा" काव्य में विरह वर्णन प्राचीन पध्दतीपर अधिक और नई पध्दतिपर कम हुआ है । "साकेत" में उर्मिला के विरहवर्णन की भी यही विशेषता मिलती है। प्राचीन पध्दति के अनुसार विरह भावना के दस रूप माने जाते है । रीतिकाल में इन दसों अवस्थाओं का वर्णन किया है अब तक यह मान्यता चल रही है । - विरह की दस अवस्थायें इस प्रकार है -

१] अभिलाषा २] चिन्ता ३] स्मरण ४] उव्देग ५] गुणकथन
६] प्रलाप ७] व्याधि ८] जडता ९] उन्माद १०] मृत्यु ।

१] <u>अभिलाषा</u> : अभिलाषा में विरहिणी नायिका की प्रिय मिलन विषयक आतुरता का अंकन किया जाता है । सिध्दार्थ यशोधरा को छोडकर चले गये थे । यशोधरासे सिध्दार्थने प्रस्थान के लिए अनुमति न माँगी थी । यशोधरा के हृदय में इस बात की पीडा गहरी थी । यशोधरा की हार्दिक अभिलाषा का चित्र सखी के प्रति "यशोधरा" काव्य में स्वाभाविक ढंग से उभरा है -

सखि प्रियतम है वनमें । किन्तु कौन इस मे१
मैं निज राज - भवन में, सखि । प्रियतम है वनमें१
उन्हें समर्पित कर दिये, यदि मैंने सब काम,
तो आवेंगे एक दिन, निश्चय मेरे राम ।
यहीं, इसी आँगन में ।

"यशोधरा" काव्य में यशोधरा सिध्दार्थ से याचना करती है कि यदि आप लोक को मार्ग दिखाने हैं तो दिखायें, किन्तु मुझ, अपनी प्राणेश्वरी को तो विस्मृत मत कीजिए -

" भले ही मार्ग दिखाओ लोक को,
गृह-मार्ग न भूलो हाय ।
तजो हो प्रियतम । उस आलोक को
जो पर ही पर दरसाय । "

२] चिन्ता : इसमें नायिका प्रिय के विषयमें इस दृष्टि से चिन्तित की जाती है कि उसके प्रियपर किसी प्रकार की आपत्तियां न आयें, और इसमें व्यक्ति को इष्ट - अनिष्ट वस्तुकी प्राप्ति - अप्राप्ति की कल्पना से घबराहट होने लगती है - जब सिध्दार्थ परिवार को छोडकर चले गये तो शुध्दोदन ने यशोधरा का धैर्य बँधाया । यशोधरा रचित के बिछुड जाने से चिन्तित होती है तथापि सिध्दार्थ की खोज के पक्षमें न थी । यशोधरा शुध्दोदन को समझाती है -

तात, सोचो, क्या गये वे इसी अर्थ हैं,
खोज, हम लावें उन्हें, क्या वे असमर्थ हैं?

सिध्दार्थपर साधना कालमें किसी प्रकारकी आपत्तियाँ न आने पाएँ, इसलिए यशोधरा अपने केशों को काटती हुई कहती है -

जाओ मेरे सिर के बाल ।
आ री कर्तरी ला, मैंने क्या पाले काले व्याल?
उलझें यहाँ न ये आपस में सुलझें वे प्रतिपाल ।"

३] स्मृति : स्मृति इस विरहदशा का गुण कथन से निकट सम्बन्ध है। इस विरह दशामें विरहिणी नायिका को अपने प्रियतम के संसर्ग में गुजारे सुखद प्रसंगों की स्मृति आती है।

" सभी सुन्दरी बालाओं में मुझे उन्होंने माना ।
सबने मेरा भाग्य सराहा, सबने रूप बखाना ।
खेद किसीने उन्हें न फिर भी ठीक पहचाना,
भेद चुने जाने का अपने मैंने भी जब जाना ।
इस दिन के उपयुक्त पात्रा की उन्हें खोज थी सभी ।"

सिध्दार्थ जिन वस्तुओं और प्राणियों से स्नेह करते थे उन्हें देखकर यशोधरा ठण्डी साँसे भरती है। रोहिणी नदी तट पर सिध्दार्थ के साथ की गयी अनेक क्रिडाएँ उसके हृदय को उध्देलित करती है -

रोहिणी, हाय । यह वह तीर,
बैठते आकर जहाँ वे धर्मधन, धृवधीर ।
मैं लिए रहती विविध पक्वान्न, भोजन, खीर ।
वे चुगाते मीन, मृग, खग, हंस, केकी, कीर ।

४] उध्वेग : यशोधरा सिध्दार्थ का गुणकथन करती है । और बाह्यप्रकृति और अन्तर्जगत् में एकरूपता का आभास पाती है । यशोधरा को सिध्दार्थ के अभाव में सारी सृष्टि अरुचिकर प्रतीत होती है । इस उध्विग्नता के क्षणोंमें अपने जीवन को समाप्त कर देना श्रेयस्कर मानती है -

मरण सुन्दर बन आया री ।
... ...
स्वामी मुझको मरने का भी दे न गये अधिकार,
छोड गये मुझपर अपने राहुल का सब भार ।

व्याकुलता और उदासी की अवस्था में यशोधरा कहती है -

सखि वे कहाँ गये है१
मेरा बाँहा नयन फडकता है ।
पर मैं कैसे मानूँ
देख, यहाँ वह हृदय धडकता है ।

५] गुणकथन : जब विरही व्यक्ति अपने प्रिय के स्मरण में रमती है, तो ही वह प्रियतम गुणकथन में भी लीन होती है । प्रियतम की स्मृति के साथ गुणकथन आरम्भ हो जाता है । यशोधरा अपने पति सिध्दार्थ के गुणकथन की सीमा पर पहुँच प्रकृति के उपहारों में भी उसका प्रभाव निहारती है, जैसे -

स्वामी के सद्भाव फैल कर फूल-फूल में फूटे ।
उन्हें खोजने को ही मानों नूतन निर्झर छूटे ।

यशोधरा सिध्दार्थ की धीरता और वीरता की प्रशंसा करती हुई कहती है कि मेरे पिताजीने तो उनके इन गुणों की व्यर्थ ही परीक्षा की थी, क्योंकी ऐसा कोई वीर था ही नहीं जो उनकी बराबरी कर सकता -

" मेरे लिए पिता ने सब से धीर-वीर वर चाहा
आर्यपुत्र को देख उन्होंने सभी प्रकार सराहा ।
फिर भी हटकर हाय । वृथा ही उन्हें उन्होंने थाहा
किस योध्दाने बढकर उनका शौर्य सिन्धु - अवगाहा१"

६] प्रलाप : प्रलाप का अर्थ बिना सोचे समझे अनर्गल बातें करना है । वियोग में व्यक्ति वेदना के कारण बिना सोचे समझे असंबध्द बात कहने लगता है। उसके ऐसे प्रलाप में कोई तत्व की बात नहीं होता ।

यशोधरा में कहीं कहीं ऐसी वृत्ति दिखायी देती है । विरही के कथन में क्रम बध्दता नहीं रहती, जैसे -

१] प्रिय क्या भेंट धरूँगी मैं१

यह नश्वर तनु लेकर कैसे
स्वागत सिध्द करूँगी मैं १

२] सोने का संसार मिला मिट्टी में मेरा,
इसमें भी भगवान भेद होगा कुछ तेरा ।

७] <u>उन्माद</u> : शोक, भय, आदि कारणोसे चित्त भ्रान्त हो जाता है । इस स्थितिमें उन्मत्त हृदय अपने आपको नहीं पहचान पाता । उध्देग के कारण इस स्थिति में विरही व्यक्ति में न तो उचित अनुचित का ज्ञान ही रख पाता है और न तो विवेक रह पाता है । इसमें व्यक्ति चेतन को अचेतन समझने की भूल करने लगता है । उसमें यह बात ज्ञात नही रहता कि-वा किससे बोल रहा है और क्या कर रहा है।

सिध्दार्थ अपना परिवार छोडकर चला जाता है, तो यशोधरा पति-वियुक्ता होती है। उसका हृदय उध्विग्न हो उठता है । वह किस रूपमें वन में गयी इस ज्ञान उसे छन्दक के कथन से होता है । ज्योंही वह यह सुनती है कि सिध्दार्थ सन्यास की साधना हेतु तपस्वी का विशेष बाना पहनकर प्रयाण कर चुके है -

" हाय । काट डाले वे केश ।
चिकने - चुपडे, कोमल कच्चे, सच्चे सुरभि- निवेश । "

यशोधरा अपने आपको यह निरा भाग्यके सहारे मानने लगती है ।

यह प्रभात या रात है, घोर तिमिर के साथ,
नाथ, कहाँ हो हाय तुम१ मैं अदृष्ट के हाथ ।

८] <u>जडता</u> : बेहोश हो जाने की अवस्था जिसे लोग शरीर में काठ मार जाना कहते हैं -

मुच्छित है हाय । मेरी मानिनी यशोधरा
बेटी उठ मैं भी तुझे छोड नहीं जाऊँगा ।
तेरे अश्रु लेकर ही मुक्ति - मुक्ता छोडूगा ।।

९] <u>व्याधि</u> : दयित के वियोग के कारण उत्पन्न रोग या मानसिक संताप व्याधि अवस्था कहलाती है । यशोधरा का दयित कब लौटेंगा उसे यह मालुम नही है। इसीलिए वह सिध्दार्थ के विरह में कृशगात्रा हो जाती है, रोती है, तडपती है, तिलमिलाती है और लाचार में यह संतोष करके दिन काटती है । लेकिन अबोध राहुल के निम्न प्रश्नों को सुनकर उसे मनस्ताप सहना पडा यह -सही सही नही बताया जा सकता -

१] तेरा मुँह पहले बडा था, अम्ब, कह तू,
रह गया तेरा मुँह छोटा, यही कह के,
दादीजी अभी तो अम्ब, रोई रह रह के ।

२] अरे, यह तो देख । पिता के पास ही यह कौन खडी है१
वे उसे मरकत की माला उतारकर दे रहे हैं । वह हाथ बढाकर-
भी संकुचित -सी हो रही है । सिर नीचा है, फिर भीअधखुली-
आँखे उन्हीं की ओर लगी हैं । माँ यह कौन है १

१०] मरण : यह विरह की चरमावस्था है । इसमें विरही मृत्यु के समान कष्ट का अनुभव करता है । और इसमें कभी कभी तो वह पंचत्व को भी प्राप्त कर लेता है । दयित के वियोग में यशोधरा अपने मरण को ही श्रेयस्कर मानती है -" मरण सुन्दर बन आया री । " यशोधरा कहती है -

स्वामी मुझको मरने का भी दे न गये अधिकार मुझ,
छोड गये मुझपर अपने उस राहुल का सब भार ।
जिये जल जल कर काया री ।

इस प्रकार विरह की अवस्थाओं को कविने "यशोधरा" काव्य में दिखाया है । हिन्दी साहित्य में "यशोधरा" काव्य का वर्णन अव्दितीय है । वह मनुष्य की उस समता की रक्षा का प्रयत्न है, ज्ञानियों ने जिसके त्याग के अनेक उपदेश दिये किन्तु नारी जातीने अपने प्राण देकर भी जिसकी रक्षा की है । संसार में जिस ममता की ओर मानवता जा रही है, उसकी प्राप्त की रक्षा यशोधरा की पवित्र भावना के व्दारा ही होगी न कि सिध्दार्थ की नीरव ज्ञान से । ज्ञान मिलता है किंतु मनुष्यों के सम्बन्धों की उपेक्षा करता है, और एक निषेधात्मक दृष्टिकोण अपनाता है । इसी निषेधवाद और जीवन से पलायन सिखानेवाले भारतीय ज्ञान के विरुध्द हमारे भारत देश की नारीयोंने सदा ही संघर्ष किया है ।

" विरह यशोधरा की आत्मा है । पर इस रचनामें वर्णित उसका रूप परंपरागत न होकर नवीन है । इसमें न षडऋतु - वर्णन है, न दूत - विधान, न निरे आँसू ही आँसू हैं, न कोरा विलाप ही विलाप । इसमें एक आदर्श पतिव्रता नारी का समग्र रूप " कुलिसहु चाहि कठोर अति कोयल कुसुमहु " - रूप चित्रित किया गया है, जिसमें आँसुओं की आर्द्रता भी है, मान की कठोरता भी, वेदना की विकलता भी है, आत्मसम्मान

का तेज भी, प्रिय के व्यवहार का क्षोभ भी है, उसके प्रति सहज अनुराग भी । यही कारण है कि यशोधरा में भारतीय नारी की संक्षिप्त, पर पुर्ण, स्मरेखा सी दृष्टिगोचर हो जाती है ।"[१]

यशोधरा संघर्ष में अपना बलिदान देकर भी मानवता के इतिहास में अमर हो गई है । राधा, नागमती, सीता, उर्मिला और यशोधरा मनुष्य को सामाजिक बनाने में अत्याधिक सहाय्यक है ।

१] चार महाकवियों के विरह-काव्य - डॉ. रामप्रसाद मिश्र- पृ.९५